Vol. 2, No. 4, (October 2013) P. 2-7 Sangeet Galaxy
ISSN: 2319-9695

नृत्य – कृष्ण भक्ति काव्य के सन्दर्भ में

डा0 प्रीति गुप्ता
सम्भल, उत्तर प्रदेश
Email ; soniya.sanjay316@yahoo.com

भारतीय परम्परा में भगवान शंकर को नृत्य का आदि प्रवर्त्तक माना गया है। वे नित्य प्रति संध्या काल में आनंदित होकर घूमते हुए नृत्य करते हैं। इस आनन्द नर्तन में सभी सम्मिलित होते हैं। उसकी विराटता में ब्रह्मा जी ताल देते हैं, विष्णु जी मृदंग बजाते हैं, सरस्वती अपनी वीणा का वादन करती हैं, सूर्य और चन्द्र वंशी (बाँसुरी) वादन करते हैं, अप्सरायें व किन्नरियाँ श्रुतियों का ध्यान रखती हैं, नन्दी और भृंगी डमरू तथा मादल बजाते हैं। इसके साथ नारद स्वर मिलाते हैं।''शिवजी के पदाघातों से पृथ्वी और हस्त संचालन से नक्षत्र–मण्डल गतिमान होता है। इसीलिए कहा गया है कि 'नृत्यमयं जगत्' अर्थात् यह समस्त संसार ही नृत्यमय है।''[1]

प्राणी–मात्र के हृदय में सोए भाव जब जाग्रत होते हैं तो वे वाणी या क्रियाओं के द्वारा अभिव्यक्त कर पाते हैं और जिस माध्यम से वे अभिव्यक्त करते है, उस माध्यम को ही कला की संज्ञा दी गई है। मन में उठी सुख और दुःख की अनुभूतियां जब गीत बनकर गूँजने लगती हैं तो उन्हीं को विभिन्न नामों से पुकार कर किसी राग का नाम दे दिया जाता है। ठीक उसी प्रकार क्रियाओं द्वारा हृदय की अनुभूतियां व्यक्त होती हैं तो उन्हे विविध मुद्राओं और अंगहारों का नाम दे दिया जाता है। गीत और नृत्य की सृष्टि इसी प्रकार हुई है। भारतीय नृत्यकला अत्यन्त पुरानी कला है जिसका विस्तार नाट्य–वेद में हुआ है। उसी के आधार पर भरत ने 'नाट्यशास्त्र' में नृत्यकला को विस्तार से समझाया है।''[2] ''भारतीय नृत्यकला में तीन पक्ष बराबर एक दूसरे के समानान्तर चलते हैं – (1) मनोरंजन, (2) देवस्तुति, (3) भाव एवं रस की अभिव्यक्ति। इस कला का उद्‌गम तो निश्चय ही देवताओं के मनोरंजन के लिए हुआ था, किन्तु मात्र मनोरंजन या विलास ही इसका लक्ष्य नहीं था। इसका मुख्य उद्‌देश्य केवल कोमलतम भावनाओं और रसों की अभिव्यक्ति करना है।''[3]

'भागवत' महापुराण के महानायक योगेश्वर कृष्ण को पूर्णावतार, पूर्णकलाविद् एवं रसराज के रूप में जनमानस में प्रतिष्ठा प्राप्त है। संगीत उनके जीवन का अभिन्न अंग रहा है। उनकी संगीतप्रियता एंव संगीत के ज्ञान का वर्णन भागवतकार ने अत्यन्त सरल, सरस एवं सुन्दर भाषा में बड़ी ही कुशलता के साथ किया है।

कृष्ण का बाल्यकाल एवं किशोर–जीवन प्रायः संगीतमय रहा। संगीत की प्रेरणा उन्होंने प्रकृति से प्राप्त की। नृत्यशील मयूरों का अनुकरण उन्हें अत्यन्त प्रिय था। उनके नृत्य का वर्णन करते हुए भागवतकार कहते हैं कि वृन्दावन में नृत्यरत मयूरों के साथ जब कृष्ण ठुमक–ठुमक कर नाचते हैं, तो मयूरों का नृत्य भी फीका पड़ जाता है एवं वो उपहास के पात्र बन जाते हैं –

''अभिनृत्यति नृत्यन्त बर्हिणं हासयन् क्वचित्।।''[4]

कृष्ण गायन एवं वादन के साथ–साथ नृत्य के भी अद्वितीय कलाकार थे। 'भागवत' में कृष्ण को नृत्य–गानादि समस्त कलाओं का आदिगुरू कहते हुए उनके कलापूर्ण नृत्य का वर्णन किया गया है –

''पादाम्बुजोऽखिल कलादिगुरूर्ननर्त।''[5]

कृष्ण रास–नृत्य के समस्त अंगों के मर्मज्ञ थे। विशेष अवसरों पर वे रास के 'ताण्डव' एंव 'लास्य' भेदों का भिन्न–भिन्न रीति से प्रयोग करते थे।

गदाधर भट्ट जी का एक पद उदाहरण स्वरूप इस प्रकार है जिसमें उन्होंने कृष्ण को सखाओं के साथ यमुना तट पर खेलते हुए चित्रित किया है। खेल खेल में गेंद यमुना में गिर जाती है और कृष्ण काली नाग का वध करने के लिए जल में कूद पड़ते हैं। उस समय कृष्ण रौद्र मुद्रा में ताण्डव नृत्य के भाव प्रदर्शित करते हैं–

''नाचत गोपाल फणिफाणारंग।
मनहु मनि नील के खंभ ऊपर सिखी नृत्य आरम्भ किये अति उमंगे।।
प्रथम तरूतुंग चढि झंप यमुना लई सुभग पट पति कटितट लपेटे।
एक घनतें निकासि और घनकौं चल्यौ श्याम घन मनहु चपलाति भेटे।।
बहुरि फिरि झगरि चढ़ि सीस 'तांडव' रच्यौ परसि पदतलाने मनु रंगु सहायौ।
चरण पटतार विषझार झरहत जतुते लतपतेक हु नीरनायो।।''[6]

'भागवत' मे भी इसी प्रकार का वर्णन किया गया है जिसमें कालिय–दमन के प्रसंग में कृष्ण के ताण्डव नृत्य का वर्णन करते हुए कहा है – ''कालिय नाग अपने एक सौ एक फनों में से जिसे ऊपर उठाता, उसी को भगवान नाचते हुए अपने चरणों को ठोकर से झुका देते। भगवान् के इस अद्भुत नृत्य से कालिय के फणरूप छत्ते छिन्न–भिन्न हो गए और वह रूधिर वमन करने लगा–

''तच्चित्रताण्डव विरूग्ण फणातपत्रो
रक्तं मुखैखरू वमन् नृप भग्नगात्रः।''[7]

'लास्य' का एक पद उदाहरण स्वरूप नन्ददास जी का प्रस्तुत है –

''लास्य भेद निपुन कोकरस उजागरी।
लेत सुलप उरप–तिरप अवनि उरज बदन फिरत,
निरतत गिरिधरन संग रंग भरी–नागरी।
वृन्दावन रम्य जहां बिहरत पिय प्यारी तहां,
मंडल रचि रास रसिक जुबती बन बाग री।
बाजत अनहद मृदंग, ताल बिना गति सुधंग,
अंग–अंग लग्यौ निरखि जग्यौ रंग–राग री।
तत्थेई शब्द करत, सकल नृत्य–भेद सहित,
सुलप सची उरप–तिरप लेऽत नाऽगरी।''[8]

''नृत्य के दो भेद किए जाते हैं – 'तांडव' और 'लास्य'। शंकर से सम्बद्ध नृत्य 'तांडव' और पार्वती से सम्बद्ध नृत्य 'लास्य'। शंकर और पार्वती के प्रतीक इन दोनों नृत्य भेदों की भिन्न प्रकृतियों को दर्शाने के लिए रखे गए है। तांडव में उदात्तता और शान्ति के दर्शन होते है तो लास्य में शालीनता, भावुकता और कोमलता के।''[9] लास्य स्वभावतया नारियों के अधिक अनुकूल माना जाता है। उक्त पद में इसी कारण राधिका को 'लास्य–भेद–निपुन' कहा गया है। इसी प्रकार कृष्ण–भक्तों के पदों में 'लास्य' तथा 'ताण्डव' नृत्य का उल्लेख भी प्राप्त होता है।

1.''नाचत गोपाल कणिकणा रंगे।
बहुरि फिरि संगरी सीस चढ़ी ताण्डव रच्यो परसिपदतालनि।''[10]
2.''ताण्डव–गति मुण्डन पर निर्त्तत बनमाली।
पग पटकत धरत न उपर करत नाग वधु आली।
सनकादिक, नारदादि, गन्धर्व सभी देत ताली।''[11]
3.''राग गुर्जरी समुद्र ताण्डव लास्य कला –निधान।
ब्रज बन्धु संग मुदित नाच लेत अवधर तान।''[12]
4.''कुंज बिहारी नाचत नीके लाडिली नचावत नीके।
ताण्डव लास्य और अंग को गने जै–जै रूचि उपजत जीके।''[13]

जिस प्रकार 'ताण्डव' शंकर की रौद्र भावनाओं का प्रतीक है, और 'लास्य' पार्वती की शालीनता का, उसी प्रकार 'रास' भगवान कृष्ण की श्रृंगार प्रधान भावनाओं का द्योतक है, जिसका वर्णन 'रास–पंचाध्यायी' में मिलता है। 'रास–पंचाध्यायी' को 'भागवत का हृदय' कहा जाता है, जिसमें वासुदेव ने कृष्ण और गोपियों की रासलीला का सुन्दरता से वर्णन किया है।
कृष्ण रास–नृत्य में अत्यन्त कुशल थे तथा इतनी तीव्र पदगति से नृत्य करते थे कि प्रत्येक गोपी को यही अनुभव होता था कि कृष्ण तो उन्हीं के साथ हैं। इस प्रकार कृष्ण गोपियों के साथ मण्डल बनाकर नृत्य किया करते थे –

''रासोत्सवः सम्प्रवृत्तों गोपीमण्डलमण्डितः।
योगेश्वरेण कृष्णेन तासां मध्ये द्वयोद्वियोः।।
प्रविष्टेन ग्रहीतानां कण्ठे स्वनिकटं स्त्रियः।।''[14]

रास के नृत्यों की एक विशेषता यह है कि नृत्य का आरम्भ सखियाँ करती हैं और कृष्ण के नृत्य की बारी बाद में आती है। इस प्रकार ये नृत्य अत्यन्त ही आकर्षक लगता है। कुछ प्रमुख रास नृत्य इस प्रकार हैं –

1. मयूर नृत्य

इस नृत्य शैली में ''श्रीकृष्ण अपनी आहलादिनी शक्ति श्रीराधा को प्रसन्न करने का प्रयास करते हैं। रास में कृष्ण की लीला प्रारम्भ होने से पहले गोपियां नृत्य करती हैं और उनके नृत्य के साथ इस पद का गायन समाजी (पद गायक) करते है –

''बहुत दिनन में कुमरि राधिका मोर कुटि आई,
मोर नृत्य देखन की उत्कंठा उर में उनके छाई।
ता दिन वाकूँ मोर नहीं पाए दुखी हो,
आँखिन में बाकी आँसू भरि आए।''[15]

मयूर नृत्य की इस अवस्था में श्री कृष्ण घुटनों के बल पर छोटे–छोटे मण्डलों के अनेक गोले बनाते हुए तेज गति से नृत्य करते हैं। यह नृत्य अति तीव्र गति में होता है। कृष्ण इस नृत्य में मोर के समान अपने पंखों को फैलाकर भूमि पर फिरकी के समान बड़े वेग से चक्कर काटते हुए आते हैं –

''इतने में आयौ–आयौ–आयौ प्यारौ मोर बन आयौ;
के तौ मोर बन आयौ, बाकूं राधा नै बुलायौ।
वो तौ मोर बन आयौ, स्याम मोर बन आयौ।''[16]

उक्त पद के बोल चलते समय राधा उन्हें (मोर रूपी कृष्ण का) दाना चुगाती हुई दर्शाई जाती हैं। इस प्रकार यह नृत्य अत्यन्त आकर्षक होता है। भरतनाट्यम का 'भ्रामरी' नृत्य भी कुछ–कुछ इसी की भाँति होता है। ''डॉ0 बसन्त यामदग्नि ने रूपाकृति एवं प्रदर्शन प्रकार की दृष्टि से ब्रजरास के मयूर नृत्य को भरतनाट्यम की भ्रमरी से मिलता–जुलता स्वीकार किया है।''[17]

2. चक्र नृत्य

रासलीला में भी कृष्ण एक चक्रनुमा बड़ा सा थाल लेकर उसे अपने हाथ की पहली उंगली पर घुमाते हुए उसमें भरा गुलाल व फूलों की पंखुडियों को चारों तरफ फैलाते हैं। चक्र को लेकर नृत्य करते हुए कृष्ण कई बार उसे ऊपर की ओर उछालते हैं ओर उछालने के बाद तत्काल उसे धारण भी करते हैं, जो दर्शकों को मंत्र–मुग्ध कर देता है।

3. दंडवादन नृत्य

अन्य रासनृत्यों की भांति दण्डावादन भी सामूहिक नृत्य है। इस नृत्य के आयोजन के समय श्री राधाकृष्ण सहित सभी सखियों के हाथों में छोटे–छोटे दण्डे होते हैं। इनको लेकर पदचापों की समान गति के साथ घूमते हुए दण्डों को परस्पर बजाते हैं। मण्डलाकार नृत्य प्रस्तुत करते हुए एक बार अपने से आगे वाले के दण्डे में बजाया जाता है तो दूसरी बार अपने से पीछे वाले के दण्डे में बजाया जाता है। डंडो को परस्पर बाजते हुए समाजी के सुनियोजित पदों का गायन एवं वाद्यों की ध्वनि के साथ नृत्य किया जाता है। इसी के साथ विभिन्न भाव–भंगिमाओं का प्रदर्शन करते हुए एक पंक्ति में समूह नृत्य किया जाता है।

''दंडवादन–नृत्य के प्रारम्भ में गीत की लय विलम्बित रहती है, परन्तु जैसे–जैसे गीत की लय बढ़ती है, नृत्य की लय भी बढ़ जाती है।''[18]

''हे घनस्याम सुन्दर स्याम हमारौ प्यारों री।
प्रानन प्यारौं, छलबल बारौं।
नैनन की सैनन सों चितवा चुराय लियौ।
जादू मोपे डारो री। हे घनस्याम।।
मोहे मुकुट माथे पै सोहै।
कुंडल हलन चलन मन मोहै।।
धा किट धुमकिट, ताकिट तक।
तक धुमकिट, धुम किट तक धा
लेत अलापन प्यारौ री, हे घनस्याम।।''[19]

इसी लयात्मक गीत के साथ–साथ वाद्ययंत्रों की सुमधुर ध्वनि भी गुंजारित होती रहती है। इसी के साथ–साथ भक्तिकालीन कवियत्री 'मीराबाई' के निम्न पद को भी आसावरी राग में गाया जाता है –

''पपीहा काहे मचावै सोर।
अमुआ की डारि कोयलिया बोलै, बन में बोलै मोर।
जो सुनि पावै विरह की मारी डारेगी पंख मरोर।।
पिया हमारे गये परदेसन, मैं बैठी मुख मोर।
'मीरा के प्रभु गिरधर नागर, चरन कमल चित चोर।।''[20]

दण्डावादन नृत्य के समय कभी–कभी राग भीमपलासी, त्रिताल में भी पदों का गायन किया जाता है। यथा –

''सुन्दर स्याम निहारौरि।
मोर मुकुट माथे पे सोहै, कुण्डल हलन चलन मन मोहै;
ब्रजधर गिरधर मुरली अधर धर, जीवन प्रान हमारौरि।
सुनर स्याम निहारौ री।।
नाचत मिलि ब्रजबाल लाल संग, छोम–छोम–छोम–छोम छ नननन
धाकिट धुमकिट तकिट तककिट।।
किर धुम किट धुम किट तक धा धा,
लेत अलापन प्यारौ री।
सुन्दर स्याम निहारौरि।।''[21]

दण्डावादन नृत्य के अवसर पर गाये जाने वाले गीत या पद भाषा की दृष्टि से भी विचित्रता लिए रहते है। –

''आबौ आबौ नन्द जूरा लाल, माखन खाबानै
रानी जसुमति प्राणाधार माखन खाबानै।
तेरे बांके मुकुट पै लटा जु झुकि रही,
छबि न्यारी गिरिवर धारी
आबौ आबौ माखन खाबानै।।''[22]

रास में ताल, मृदंग, मंजीरा, बांसुरी, बीन ,इकतारा तथा चंग आदि वाद्यों के प्रयोग से रास का आकर्षण दुगुना हो जाता है।

पद रास– पद रास में पदों की लय का विशेष ध्यान रखा जाता है। विद्यापति ने एक स्थान पर ताली रास की ओर संकेत किया है –

''बाजत द्रिगि द्रिगि धौंद्रिम द्रिमिया।
नटति कलावति माति श्याम संग।
कर करताल प्रबन्धक ध्वनियां।
डम डम डफ डिमिक डिम मादक
रूनु झुनु मंजीर बोल''[23]

ताली रस में सभी नर्तक मंडलाकार खड़े हो जाते हैं और कुछ वाद्य यन्त्रों की सहायता से नर्तकों के द्वारा बनाई गई करतालों के बीच ताली रास प्रारम्भ किया जाता है।

ब्रज में इन सभी रासों के अतिरिक्त चरकला रास, चांचर, ढाढ़ी–ढाढ़िनी आदि रोचक नृत्य प्रचलित है। ''सूरदास ने कृष्ण जन्म के अवसर पर 'हुरके' बजाते हुए ठाढ़ी–ठाढ़िनी नृत्य का उल्लेख किया है।''[24]
''दाढ़ी और दाढ़िनी गावैं, ठाढ़े हुरके बजावैं हरषि असीस देत मस्तक नवाई के।''[25]

राधा बल्लभ सम्प्रदाय में एक और नृत्य का वर्णन हुआ है, वह है–ढाँढ़ी–ढाँढ़िनी का नृत्य'' यह समाज संगीत का नृत्य है। इसका आयोजन जन्मोत्सव के अवसर पर ही हुआ करता है। ''यह नृत्य ढाँढ़ी और ढाँढ़िनी के नृत्य का अनुकरण है। जोकि चिर पूर्व काल में गोप समाज के पुत्र–जन्मोत्सव पर अनिवार्य रूप से हुआ करता था।''[26]

''दाढ़िनि मेरी नाचै – गावे, हो हूं ढाढ़ बजाऊं।''[27]

गो0 हित हरिवंश और राधा कृष्ण के जन्मोत्सवों के पदों में इसका वर्णन पर्याप्त रूप से मिलता है –

''विमल जस ढाँढी करत बखान। बजत बधाई नन्दराई ग्रह प्रगटभयौ सुखदान।।''[28]

इसके नर्तक ढाँढ़ी और ढाँढ़िनी समाज में गाये जाने वाले पदों के आधार पर भाव प्रदर्शन और गान किया करते है। इनके अपने स्वतंत्र गीत और नृत्य नहीं होते। इस दृष्टि से यह नृत्य वृन्दावनी समाजगान का ही एक अंग माना जाता है। वृन्दावन रस की वाणी साहित्य में इसका उल्लेख भी समाज के साथ ही मिलता है–

''सुनि मन दै उत्सव करवायौ। वन ते रसिक समाज बुलायौ।।
गुरू कुल नर–नारी गण आये। बाजे बजे बधाये गाये।।
ढाँढ़ी–ढाँढ़िनी कौ शुभ वैष। नाचत विरदन पढ़त सुदेश।।''[29]

इस प्रकार कहा जा सकता है कि कृष्ण भक्ति काव्य में नृत्य का विशेष आकर्षण है। ताण्डव, लास्य, रास व रास के अन्य प्रकार, मयूर नृत्य, चक्र नृत्य, दण्डावादन नृत्य, ढाँढ़ी–ढाँढ़िनी नृत्य कलात्मक प्रतिभा के परिचायक है। साथ ही साथ इनसे मिलने वाली रस विभोरता भी अदभुत व अकथनीय है।

,,,,,,,

सन्दर्भ सूची–

1. संगीत विशारद – प्रभुलाल गर्ग, पृ0–671
2. वही, पृ0–671
3. 'संगीत' मासिक पत्रिका सितम्बर, 2003– सम्पादक–लक्ष्मीनारायण गर्ग, पृ0–5
4. श्रीमद्भागवत दशम स्कन्ध 10/15/11
5. वहीं 10/16/26
6. चैतन्य सम्प्रदाय और संगीत – डॉ0 नीलम सैम्भी, पृ0–74
7. श्रीमद्भागवत् – दशम स्कन्ध– 10/16/30
8. संगीत' मासिक पत्रिका अक्टूबर 2005, पृ0–4
9. The Dances of India – Reginald & Jamila Massey (1989), Page - 14
10. अष्टछाप–परिचय–कृष्णदास, पृ0–33
11. राग रत्नाकार, भक्त–चिन्तामणि, पद–129, पृ0–57
12. हस्तलिखित पद संग्रह–कृष्णदास– डॉ0 दीनदयाल गुप्त, पद–30
13. छप्पय संख्या, भक्त केशव–माला, पृ0–145
14. श्रीमद्भागवत् – दशम स्कन्ध 10/33/3
15. संगीत' मासिक पत्रिका दिसम्बर 2007, पृ0–24
16. वही, पृ0–24
17. रासलीला तथा रासानुकरण विकास, डॉ0 बसन्त यामदग्नि, पृ0–214
18. 'संगीत' मासिक पत्रिका दिसम्बर–2007, पृ0–25
19. ब्रजरास में संगीत–आरती श्रीवास्तव, पृ0–79
20. वही, पृ0–79
21. श्री राधाकृष्ण लीला प्रसंग, श्री राधामाधव सेवा संस्थान गोरखपुर, पृ0–24–25
22. ब्रजरास में संगीत – आरती श्रीवास्तव, पृ0–80
23. विद्यापति पदावली, पृ0–327
24. मध्ययुगीन कृष्णकाव्य में सामाजिक जीवन की अभिव्यक्ति– डॉ0 हरगुलाल, पृ0–403
25. सूरसागर– प्रथम भाग, पृ0–221, पद सं0–649
26. हिन्दी भक्ति काव्य में रस भक्ति धारा और वाणी साहित्य – किशोरी शरण 'अलि', पृ0–415
27. सूरसागर– प्रथम भाग, पृ0–223, पद सं0–665
28. गोस्वामी रूपलाल जी की वाणी–लाल जू की बधाई –गो0 रूपलाल जी पद संख्या–1
29. रसिक अनन्य माल – भगवत मुदित जी – नागरीदास जी की परचई